ORIGINAL RESEARCH PAPER

Sanskrit

भास के नाटकों की विशेषता

KEY WORDS:

डॉ. सोमा कुमारी

एम. ए., पीएचडी, स्नातकोत्तर संस्कृत विभाग, तिलकामांझी भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर।

ABSTRACT

भास संस्कृत साहित्य के, विशेषतः नाट्य साहित्य के एक अमर कवि एवं नाटककार हैं, जिनकी काव्यकला इस नवीन युग में भी अपना प्रकृष्ट महत्व धारण करती है तथा काव्यरसिकों को अपने अलौकिक चमत्कार से मुग्ध करती है। भास के नाटकों की बहुलता और उनके कथा स्रोतों की विविधता से उनकी मौलिकता एवं नाट्य-कला दक्षता का पता चलता है। यद्यपि नाट्यशास्त्र के नियमों का सम्यक परिपालन उनके रूपकों में नहीं देखा जाता है, फिर भी उनके रूपक श्रेष्ठ और आकर्षक हैं। महाभारत की कथा से सम्बद्ध नाटकों को भास ने अपनी नवीन कल्पना शक्ति से अत्यंत मनोरंजक बना दिया है। प्रतिमा तथा अभिषेक में भास की मौलिक सुझ भी दिख पड़ती है। प्रतिमा नाटक के वस्तु - विन्यास का आधार वाल्मीकि का रामायण ही है। अतः भास के नाटकों पर वाल्मीकि तथा व्यास का प्रभाव भी प्रतिबिंबित होता है। प्रस्तुत शोध आलेख में भास की नाट्य - कला की विवेचना विभिन्न दृष्टिकोणों से किया गया है, यथा – कथावस्तु, अभिनेयता, पात्र - विवेचन (चरित्र – चित्रण) कवित्व और स्वाभाविकता।

भूमिका

महाकवि भास के नाटकों में मानव जीवन के विविध रूपों का पर्यवेक्षण करने का भरपूर अवसर उपलब्ध होता है। अतएव उनके नाटकों की विविधता एवं मौलिकता उनकी नाट्य कुशलता का परिचायक है। इनके प्रायः सभी नाटक अभिनेय हैं। इनके नाटकों में सुक्ष्म चरित्र विश्लेषण की अपेक्षा मूर्त घटना संगठन अधिक रुचिकर बना है। नाट्यशास्त्र के प्रायः सभी नियमों का अक्षरसः पालन न करने पर भी उनके सभी नाटक रोचक हैं। रामायण से सम्बद्ध इनके नाटक कथा संविधान की दृष्टि से शिथिल होने पर भी उनकी अभिनेयता में कहीं भी कमी नहीं है। जहां तक महाभारत की कथा पर आश्रित नाटकों का प्रश्न है उन्हें भास ने अपनी अनूठी कल्पना शक्ति से अत्यन्त रोचक बना दिया है। घटना का ऐक्य उनके घात- प्रतिघात, कवित्व, चरित्र - चित्रण हर दृष्टि से ये नाटक आकर्षक हैं। सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इन नाटकों में न तो कहीं वर्णन की अधिकता है और न अभिनेयता की अवहेलना। कथावस्तु का न कहीं अनावश्यक विस्तार ही है और न कार्यान्विति की शिथिलता। यही कारण है कि इनके सभी छोटे-बड़े नाटक रंगमंच के बिल्कुल उपयुक्त हैं। अपने वर्णन चातुर्य एवं नाट्य नैपुण्य द्वारा भास अनुपस्थित पात्रों का परोक्ष घटनाओं को रंगमंच पर उपस्थित या घटित किए बिना ही प्रेक्षकों के मन में उनका ऐसा आभास करा देते हैं, मानो उसका प्रत्यक्ष चित्रण हो रहा हो।[1]

'प्रतिमा' नाटक में भास ने एक नवीन कल्पना को कथानक के परिवृंहण में लगाया है। वह भास की कोरी कल्पना नहीं, प्रत्युत ऐतिहासिक तथ्य पर आधारित है। अजातशत्रु तथा बिंबिसार की पुरुषाकृति मूर्तियों से इस तथ्य की पुष्टि होती है।[2]

महाभारत के आधार पर जिन नाटकों की रचना हुई है उन्हें भास ने अपनी अनूठी कल्पना शक्ति से अत्यंत रोचक बना दिया है।[3] कहीं-कहीं वे नवीन संविधानक भी खोज निकालते हैं। 'दूतघटोत्कच' का पूरा कथानक कवि की निजी कल्पना से प्रसूत है। 'कर्णभार' में कवि ने कर्ण के दानशील चरित्र का बड़ा ही उत्तम उपन्यास किया है। 'दूतवाक्य' में श्रीकृष्ण के चरित्र की महत्ता और दुर्योधन के चरित्र की हीनता बड़े कौशल से प्रदर्शित की गई है। 'उरुभंग' में भीम के द्वारा दुर्योधन को गदायुद्ध में परास्त करने तथा उसकी जंघा को चूर्ण करने का बड़ा ही विशद विवरण है। संस्कृत नाटकों में 'उरुभंग' ही दुखांत नाटक का एकमात्र प्रतिनिधि है और यहां भी दुर्योधन की मृत्यु रंगमंच के ऊपर ही दिखला कर भास ने भरत के शास्त्रीय नियमों का उल्लंघन किया है।[4]

भास के नाटकों में नाटकीय एवं अप्रत्याशित घटनाओं की मनोहारिणी श्रृंखला दिखाई पड़ती है। उदयन जैसे राजा को कैद में डलवाकर वैभवशालिनी वारवनिता वसंतसेना को दरिद्र ब्राह्मण चारुदत्त के प्रति अनुरक्त दिखाकर तथा अर्जुन और अभिमन्यु, भीम और घटोत्कच जैसे पिता- पुत्रों में परस्पर युद्ध कराकर भास ने अपनी कृतियों में मनोरंजन तथा शिक्षा की प्रभूत सामग्री प्रस्तुत की है।[5]

भास की सभी रचनाएं नाटकीय दृष्टि से अत्यंत सफल हैं। उनके कथानक घटना प्रधान और अंतर्द्वंद से युक्त हैं। प्रत्येक नाटक की घटनाएं तेजी से आगे बढ़ती हैं। इस तीव्रगतिशीलता में घटनाओं की नवीनता देखते ही बनती है। अपने वर्णन चातुर्य एवं नाट्य- नैपुण्य द्वारा भास ने पौराणिक पात्रों को वास्तविकता, मनोवैज्ञानिकता और मार्मिकता के साथ चित्रित कर उन्हें सर्वथा नवीन एवं प्रभावोत्पादक बना दिया है।[6]

भास के नाटकों के संवाद बड़े ही चुस्त, संक्षिप्त, अनायासपूर्ण तथा नाटकीय दृष्टि से प्रभावजनक हैं। 'स्वप्नवासवदत्त', 'अविमारक' और 'उरूभंग' के संवाद इस दृष्टि से विशेष उल्लेखनीय हैं। पद्यों का आश्रय लेकर अपने पात्रों में संवाद कराने का भास का ढंग अनूठा है। वे एक ही पद्य को पादों या अपपादों में विभाजित कर उन्हें विभिन्न पात्रों के मुख से कहलाते हैं, जैसे- प्रतिमा नाटक[7] के तृतीय अंक के प्रथम श्लोक में, पंचरात्र 1/17 [8] में तथा उरुभंग[9] के 21वें श्लोक में आदि। शीघ्र उत्तर- प्रत्युत्तर तथा चुभते हुए संवादों के लिए ऐसे प्रयोग नितांत सफल एवं चमत्कारक हैं।

पात्रों के चरित्र- चित्रण में भास बहुत निपुण हैं। अपने नाटकों के प्रमुख पात्रों का नामोल्लेख मंगलाचरण श्लोकों में ही कर देना (जिसे मुद्रालंकार कहते हैं) भास को विशेष रूचिकर मालूम देता है। 'पताकास्थानक' का स्थल- स्थल पर उपयोग कर वे अपने नाटकों में चमत्कार उत्पन्न कर देते हैं। शिष्ट एवं परिष्कृत हास्य के पुट के कारण ही 'भासो हास:' [10] की उक्ति उनके विषय में

प्रचलित है। भास उत्कृष्ट कोटि के कवि भी हैं, किंतु अपने कवित्व को वे अपनी नाटकीयता पर कभी हावी नहीं होने देते। भास के पात्र प्रकारमात्र (टाइप) न होकर वस्तुतः सजीव व्यक्ति हैं। उनका व्यक्तित्व इतना सुस्पष्ट है कि हम उन्हें भूल नहीं सकते। भास के उदयन में गंभीरता है, धीरोदात्तता है। इसकी तुलना में हर्ष का उदयन (प्रियदर्शिका तथा रत्नावली में चित्रित) बिल्कुल फीका, विवर्ण तथा अनाकर्षक पात्र है। प्रतिज्ञा नाटक में योगंधरायण की बुद्धिमत्ता तथा लोकचातुरी का रुचिर चित्रण कर भास ने उसे एक आदर्श अमात्य के रूप में दिखलाया है। भास की नायिकाएं भी कम मनोरंजक नहीं है। वासवदत्ता के औदार्य का चित्रण पतिव्रता के आदर्श रूप की झांकी प्रस्तुत करता है। वासवदत्ता अपनी वास्तविकता को छिपाकर अपने पतिदेव के कल्याण के लिए अपूर्व त्याग का परिचय देती है। पद्मावती के साथ रहने पर भी उससे किसी प्रकार का सपत्नीद्वेष नहीं करती, बल्कि वह स्वयं पद्मावती के साथ उदयन का विवाह होने देती है। इस प्रकार भास के नाटकों में हमें भारतीय संस्कृति की, त्याग की, सहिष्णुता की अपूर्व झांकी देखने को मिलती है। कुरंगी का चरित्र भी सुंदर है। नाटक के विषयानुसार नाना रसों का उन्मीलन है, जिनमें वीर तथा श्रृंगार का प्राधान्य है। इस प्रकार भास कथावस्तु के विन्यास में और पात्रों के चरित्र- चित्रण में प्रतिभासंपन्न नाटककार है - इसमें दो मत नहीं हो सकते।

निष्कर्ष

भास के सभी नाटकों में रसों का उचित समन्वय किया गया है। रस का सम्यक् संचार ही नाटकों का प्राण होता है। नाटककार का एकमात्र लक्ष्य रसोद्बोध ही होता हैं जिसे वह पात्र चरित्रांकन, कथोपकथन आदि साधनों द्वारा निष्पंन्न करता है। भास की भाषा अत्यंत सरल और प्रवाहपूर्ण है इसलिए इनके नाटक सर्वप्रिय हैं। समयानुकूल रसानुभूति युक्त पद्यों का समावेश भास ने अपने नाटकों में किया है। श्रृंगार रस का वर्णन कोमल पदावली में किया गया है। इनके नाटकों में मानवीय भावनाओं का उद्गार बहुत ही आकर्षक ढंग से प्रस्तुत किया गया है जो सहृदयों के मनों को अपनी ओर आकर्षित कर लेती है। यथा-

"स्मृत्वा – स्मृत्वा याति दुखं नवत्वं प्रद्वेषो
संकल्पात् उपजायते शरीरेअरि:प्रहरति हृदये सुजनस्तथां"

इन पद्यों मैं भाव वर्णन के साथ – ही - साथ मनोवैज्ञानिकता का कितना सुंदर उदाहरण मिलता है।

भास का प्रकृति चित्रण भी सुंदर, स्वाभाविक और रोचक है। उन्होंने बाह्य प्रकृत्ति को अंतः प्रकृति के अनुरूप ही चित्रित किया है। भारतीयता की सारी भावनाएं भास के नाटकों में दिखलाई पड़ती है। उनके नाटकों में पितृभक्ति, पतिव्रत धर्म, क्षमा और त्याग सब जगह वर्णित है। प्रतिमा नाटक में एक उपमा द्वारा पतिव्रत प्रेम का ज्वलंत उदाहरण द्रष्टव्य है। यथा "अनुचरन्ति शशांक राहु दोषे च तारा" इत्यादि।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि भास की नाट्यकला पर हर दृष्टि से यथाकथानक, पात्र – विवेचन, कथोपकथन, संवाद – योजना, अभिनेयता, प्रकृति – चित्रण, भाषा शैली, और रस - परिपाक आदि पर यथासंभव प्रकाश डाला गया है। सारांशतः प्रस्तुत शोध आलेख में भास की नाटककृतियों का नाट्यकला संबंधी विशिष्ट गुणों का अवलोकन किया गया है। वस्तुतः भास संस्कृत साहित्य के अद्वितीय नाटककार है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. भास, भासनाटकचक्रम्. व्याख्याकार - रामचंद्र मिश्र, चौखंबा विद्याभवन, वाराणसी. 2014.
2. उपाध्याय, बलदेव, संस्कृत साहित्य का इतिहास. शारदा निकेतन, वाराणसी, 1978.
3. पांडे तथा व्यास, संस्कृत साहित्य की रूपरेखा. साहित्य निकेतन, कानपुर, 1982.
4. उपाध्याय, बलदेव, संस्कृत साहित्य का इतिहास. पुनर्मुद्रण – 1983, पृष्ठ संख्या 413
5. व्यास, नानूराम, संस्कृत साहित्य की रूपरेखा. 1982.
6. चौधरी, डॉ रामविलास. संस्कृत साहित्य का समालोचनात्मक इतिहास. मोतीलाल बनारसी दास, दिल्ली, 2010
7. भास.'प्रतिमा' नाटक, 3/1
8. भास. पंचरात्र, 1/57
9. भास. उरुगंग, 21वां श्लोक
10. चौधरी, रामविलास. संस्कृत साहित्य का समालोचनात्मक इतिहास. मोतीलाल बनारसी दास, 1998.